के.हि.सं. गवेषणा, अनुप्रयुक्त भाषाविज्ञान, भाषा शिक्षण तथा साहित्य-चिंतन की शोध-पत्रिका

अंक-116 : चैत्र-ज्येष्ठ, 2076/अप्रैल-जून, 2019

© सचिव, केंद्रीय हिंदी शिक्षण मंडल, आगरा

प्रकाशक : विभागाध्यक्ष, अनुसंधान एवं भाषा विकास विभाग, केंद्रीय हिंदी संस्थान, आगरा

संपादकीय कार्यालय : अनुसंधान एवं भाषा विकास विभाग, केंद्रीय हिंदी संस्थान, हिंदी संस्थान मार्ग, आगरा - 282005
फोन/फैक्स 0562-2530684
ई-मेल : gaveshnapatrika@gmail.com

सदस्यता शुल्क :

व्यक्तिगत	प्रति अंक	रु. 40.00	
	वार्षिक	रु. 250.00	(डाक खर्च सहित)
संस्थागत	वार्षिक	रु. 350.00	(डाक खर्च सहित)
विदेशों में	प्रति अंक	$ 10.00	
	वार्षिक	$ 40.00	

मुद्रक : राष्ट्रभाषा ऑफसेट प्रेस, आगरा

'गवेषणा' में प्रकाशित सामग्री से संपादक मंडल या संस्थान की सहमति होना अनिवार्य नहीं है। प्रकाशित सामग्री के उपयोग के लिए स्वामी/प्रकाशक की अनुमति आवश्यक है।

स्वामित्व : **सचिव, केंद्रीय हिंदी शिक्षण मंडल, आगरा**

अनुक्रम

प्रधान संपादक की कलम से/ **प्रो. नन्द किशोर पाण्डेय** 5-

सैद्धांतिक पक्ष

आचार्यों के आचार्य : भर्तृहरि — **पाण्डेय शशिभूषण 'शीतांशु'** 9-
भाषा-प्रयुक्ति प्रयोजन (राजभाषा हिंदी के संदर्भ में) — **प.प. आण्डाल** 14-
अनुवाद और पारिभाषिक शब्दावली चिंतक : राजा राजेन्द्रलाल मित्र — **हरीश कुमार सेठी** 27-

देशांतर

बी.बी.सी. वर्ल्ड सर्विस की वर्तमान स्थिति : दशा और दिशा — **तुकाराम दौड** 39
पर्यटन-अनुवाद एवं सूचना प्रौद्योगिकी — **मोहसिन खान** 49

मीमांसा

हिंदी एवं रोङ्मै-स्थानवाचक क्रिया विशेषण का तुलनात्मक अध्ययन — **के. रेखा**, **ह. सुवदनी देवी** 5
नारी के महत्व की अपौरुषेय एवं आर्ष दृष्टि — **विजय पाण्डेय**

साहित्य

सेठ गोविन्ददास की रचना-यात्रा — **दानबहादुर सिंह**
समकालीन हिंदी लेखिकाओं की रचनाओं में जल से जुड़ी संवेदना — **रंजित एम.**

समकालीन हिंदी लेखिकाओं की रचनाओं में जल से जुड़ी संवेदना

रंजित एम.

"प्रकृति पर मनुष्य की विजय को लेकर ज्यादा खुश होने की जरूरत नहीं, क्योंकि ऐसी हर जीत हमसे अपना बदला लेती है। पहली बार तो हमें वही परिणाम मिलता है जो हमने चाहा था, लेकिन दूसरी और तीसरी दफा इसके अप्रत्याशित प्रभाव दिखाई पड़ते हैं जो पहली बार के प्रत्याशित प्रभाव का प्रायः निषेध कर देते हैं। इस तरह हर कदम पर हमें यह चेतावनी मिलती है कि हम प्रकृति पर शासन नहीं करते 'डायलेक्टिक्स ऑव नेचर' पुस्तक में विज्ञान और टेक्नोलॉजी के विकास के साथ प्रकृति से बड़े पैमाने पर छेड़खानी करने की पूँजीवादी प्रवृत्ति के दुष्परिणामों के प्रति चेताते हुए फ्रेडरिक एंगेल्स के इस उक्ति से यह आलेख शुरू कर रहा हूँ।

"साहित्य समय और समाज के साथ चलते हुए उन्नत भविष्य के सृजन का दूसरा नाम है, अतः जीवन और जगत की कोई भी समस्या उसकी विषय-परिधि में आयेगा ही। पारिस्थितिकीय विमर्श प्रकृति और पर्यावरण के साथ मनुष्य के संतुलित समन्वयात्मक संबंध का नाम है। इसकी परिधि में जैविक विविधता को बचाने की जद्दोजहद के साथ प्रकृतिरूपा स्त्री की गरिमा को बचाने की संवेदनात्मक पहल भी शामिल है।"[1]

पर्यावरण के जितने भी प्रकार हैं उन सबके बारे में बहस करना है तो वह उतना आसान काम नहीं है, इसलिए पर्यावरण का प्रमुख हिस्सा जल के बारे में कुछ विचार यहाँ प्रस्तुत हैं। धरती पर जीवन के अस्तित्व को बनाए रखने के लिए जल का संरक्षण और बचाव बहुत जरूरी होता है। जल से ही फसलें लहलहाती हैं, जल से ही सब्जियाँ उगाई जाती हैं। जल वनस्पति एवं प्राणियों के जीवन का आधार है उसी से हम मनुष्यों, पशुओं एवं वृक्षों को जीवन मिलता है। आषाढ़ मास से जल के अमृत बिंदुओं का स्पर्श होता ही धरती से सीधी गंध उठने लगती है। कई दिनों की धरती की प्यास बुझ जाती है। 'रामचरितमानस' में कविवर तुलसीदास जी ने लिखा है-

"क्षिति, जल, पावक, गगन, समीरा।
पंच रचित अति अधम शरीरा।।"[2]

अर्थात हमारा शरीर पंच-तत्वों यथा क्षिति, जल, पावक, गगन तथा समीर से मिलकर बना है। इन पंच-तत्वों में से जल सबसे महत्वपूर्ण है। मगर आज क्या हम इस के बारे में चिंता कर रहे हैं, इस पर भी गहन चिंतन करने की आवश्यकता है।

प्राचीनकाल से ही भारत में नीर, नारी और नदी तीनों का गहरा संबंध और सम्मान था। इन तीनों को हमारे ऋषि-मुनियों ने पोषक माना है। लेकिन आज तो नदियों तथा अन्य जलक्षेत्रों की स्थिति बेहद खराब है। नदियों से लेकर जल के दूसरे प्रमुख स्रोतों, जैसे झील, तालाब और मौसमी नदियों पर भी अतिक्रमण कर उन्हें पाटा जा रहा है। नदियों का हमारे जीवन में ठीक वही महत्व है, जो हमारे शरीर में खून ले जाने वाली धमनियों का। यदि धमनियों में खून ठहर जाए तो मौत निश्चित है। उसी तरह नदियों का प्रवाह रुकने का मतलब है सामूहिक मृत्यु जैसे परिणाम। देश की नदियों के हालात तो यही बताते हैं कि लगभग सात राज्यों की 27 नदियों का दम तो घुट ही रहा है, इन्हें नदी भी नहीं कहा जा सकता हमारे देश में बढ़ते प्रदूषण से नदियों का जीवन खतरे की ओर अग्रसित हैं। समकालीन हिंदी लेखिकाओं ने इस ज्वलंत समस्या को किस प्रकार अपनी रचना में चित्रित किया है, यही इस लेख में परख रहे हैं।

जे. जयश्री जी "नेल्लूर के प्लास्टिक आदमी" नामक कहानी में जल शोषण के बारे में सूचना दे रही हैं। प्लास्टिक आदमी जिसको लोग पुकारते हैं, सत्तर साल की है। उनकी जवानी में वह नेल्लूर गाँव में आया था। उस समय तेनार नदी में स्फटिक-सा सुंदर पानी था। धीरे-धीरे तेनार के तट पर स्थित वहाँ गाँव-शहर बनने लगे। तेनार का पानी दूषित होने लगा। धीरे-धीरे पेड़-पौधे गायब हुए। पगडंडियों की जगह राजपथ आये। नई-नई दुकान आयीं। सब लोग अपनी-अपनी जगह का कचरा तेनार में डालने लगे और अंत में तेनार नाम के वास्ते नदी बन गई। सालों बाद याकोव नामक एक पुराना किसान मच्छर बढ़ने का कारण ढूँढ़ते-ढूँढ़ते तेनार तक पहुँच गया। तेनार की हालत देखकर वह अस्त-त्रस्त हो गए। नया मीडिया और नए आविष्कारों के सहारे वह तेनार बचाव आंदोलन शुरू करता है। शुरू में उन्हें बहुत कठिनाइयों का सामना करना पड़ा। ख़ासकर प्लास्टिक उपभोक्ताओं से। लेकिन अंत में वे भी मानने लगे और तेनार से सभी कचरा निकालकर फिर शुद्ध बनाए और एक बार नेल्लूर को हरिताभ बनाने की कोशिश में वहाँ के नौजवान भी शामिल होते है। याकोव और उनके साथ काम करने वाले लोगों के अथक परिश्रम का नतीजा यह है कि यह नदी एक बार फिर से निर्मल हो गई है। यहाँ लेखिका सहकारिता के सहारे व्यक्ति और व्यक्ति प्रकृति के बीच संतुलित संबंध कैसे स्थापित करना है यह व्यक्त कर रही है।

ग्रामीण भारत की औरतें पर्यावरण में हो रहे क्षरण के कारण परेशानियों का सामना कर रही हैं। पूरी दुनिया में शुद्ध जल एक समस्या बन चुका है। मैग्सेसे पुरस्कार विजेता, पानी वाले

बाबा, सत्येंद्र सिंह ने साफ कहा है कि अगर हालात ना बदले तो अगला विश्व युद्ध पानी के लिए होगा। विश्व आर्थिक मंच की वैश्विक जोखिम रिपोर्ट 2016 में जल संकट को सबसे अधिक प्रभाव डालने वाले दस खतरों में तीसरा खतरा बताया गया है।

आज हम नदियों के किनारे जरूर हैं, किंतु नदियों के करीब नहीं हैं। हम इन्हें अपनी सभ्यता मानते हैं, किंतु इनके साथ हम अपना व्यवहार मैला ढोने वाली गाड़ियों-जैसा करते हैं। आज जब हम अपने आस-पास की नदियों का अवलोकन करते हैं, तो यह मानना ही पड़ेगा कि हमने अपनी सभ्यता और संस्कृति को ही भुला दिया है। गाँवों के विकास में जल स्रोत महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं तथा गाँवों के चारों ओर बाग-बगीचे पाए जाते हैं। यद्यपि समय के परिवर्तन के साथ गाँवों की मूल संरचना में भी परिवर्तन हुए हैं किंतु हमारी मूल संस्कृति को आज भी गाँव ही संजोए हुए हैं।

इस बड़ी समस्या को अकेले या सामूहिक रूप में हमें ठीक करना है। क्योंकि भारतीय सभ्यता और संस्कृति में नदियों का खासा महत्व रहा है। हाल ही में पंजाब के संत श्री बलबीर सिंह सींचेवाल जी ने नदी को नयी जिंदगी प्रदान की है। नदियों की रक्षा अपने बच्चों की रक्षा करने जैसी है। हम सबको स्वस्थ रहने के लिए, हमारी नदियों का स्वस्थ रहना बहुत जरूरी है। नदी किनारे रहने वाला समाज के जन्म से मरण तक, जो भी संस्कार होते थे, उससे संस्कृति का निर्माण होता था। जीवनदायिनी नदियों की रक्षा के लिए अब भी हम नहीं चेते तो हमारे जीवन पर संकट पैदा हो जाएगा। मीना अग्रवाल जी की "नारी और नदी' कविता की पंक्तियाँ यहाँ मुझे याद आ रही हैं-

"नदी नाम है निरंतरता का
नदी नाम है एकरूपता का
नदी ही नाम है समरूपता का
नदी कल्याणी है मानवता की
वह तो संवाहक है नवीनता की
आओ हम भी सीखें नदी से
कर्मपथ पर गतिशील रहना,
(नारी और नदी, मीना अग्रवाल, भारतीय काव्य का विश्वकोश)

मानव सभ्यता और संस्कृति का विकास नदियों के किनारे हुआ है, यह सर्वज्ञात तथ्य है। इंसान और नदी का रिश्ता माँ और बच्चे की तरह है। भारत इस मामले में भी अनूठा है। हमने नदियों को माँ ही नहीं देवी का दर्जा दिया। हमारे पुरखों ने ऐसी परंपराएँ इसलिए बनायी थीं कि प्रकृति के प्रति हमारे मन में श्रद्धा हो। पुरखों की बनाई धार्मिक परंपराओं को हमने खूब निभाया और प्रकृति की रक्षा की उपेक्षा करते रहे। आज नियम से नदियों की आरती होती है, उनकी पौराणिक

कथाएँ सुनाई जाती हैं, नदियों से जुड़े तमाम कर्मकांडों को पूरा किया जाता है और बताया जाता है कि यह सब मानवता का उद्धार करने के लिए है। आज हम नदियों के किनारे जरूर हैं, किंतु नदियों के करीब नहीं हैं। इसके बारे में क्षमा शर्मा ने अपनी कहानी में चर्चा कर रही है।

क्षमा शर्मा जी की "जमुना जी तक" नामक कहानी में बढ़ रहे शहरीकरण और उसके कारण गावों में होने वाले सांस्कृतिक, पारिवारिक क्षेत्रों में परिवर्तन को पर्यावरण के माध्यम से चित्रित किया है। शहर से पाँच साल पहले जमुना नदी के किनारे स्थित अपनी चाची के यहाँ आने की स्मृति से कहानी शुरू होती है। पाँच साल पहले जो गाँव वहाँ था, वह बिल्कुल नहीं रह गया है। पेड़-पौधे, नदी सब बदल गए हैं। प्रकृति से जुड़कर जीने वाले लोग अब घर के चहार-दीवारी के अंदर दूरदर्शन के सामने बैठ कर जीने लगे हैं। जमुना नदी तो कचरों से भरी हुई है। किसी भी काम के लिए एक साथ आने वाले अब अलग-अलग हो चुके हैं। लेखिका को देख कर चाची खुश हो जाती है और वापस जाते वक्त वह उनके पैरों पर पड़ रही है। उसकी एक ही कामना थी-

"मर जाऊँ तो जा चोले ए जमनाजी तक पहुँचा दियो"

"हाँ, चाची पर जमुना क्या अब वो जमुना है। गंदगी और कूड़े से भरी"

"नहीं, बिटिया मोकूँ तो वो जमना मईया है। मईया गंदी है जाये तो भूल जावतें" भारतीय धर्म और आस्था पर्यावरण पर केंद्रित थी। उसे बदलना हमारे बस की बात नहीं है।

औद्योगीकरण देश के विकास के लिए अति आवश्यक है लेकिन यही औद्योगीकरण बीमारियों की जड़ है और नदी प्रदूषण का मुख्य कारण भी है। देश की अधिकतर फैक्ट्रियों, उद्योगों का कचरा, रसायन सब का सब नदियों में प्रवाहित हो रहा है उसे रोकने का कोई उपाय नहीं है, जहाँ हो भी सकता है वहाँ उद्योगपति अपने लाभ वृद्धि के लिए करना ही नहीं चाहते। नदियों का मानव सभ्यता के विकास में अमिट प्रभाव है। इसके बिना सभ्यता और संस्कृति की कल्पना ही नहीं की जा सकती है। गौरवमय परंपरा वाले देश भारत में नदियों का जनजीवन से अटूट संबंध कई रूपों में उजागर होता है। यहाँ सदियों से स्नान के समय पाँच नदियों के नामों का उच्चारण तथा जल की महिमा का बखान एक भारतीय परंपरा बन गई है।

हिंदी की महिला लेखिकाएँ अपनी रचनाओं के ज़रिये यह दिखा रही हैं कि पर्यावरण-प्रदूषण मानव और जीवधारियों के लिए भंयकर चुनौती है। मनुष्य अपने बुद्धि-चातुर्य और दूरदृष्टि से प्रगति के रथ को गतिशील बनाये हुए है। पर्यावरण की सुरक्षा व उसके खतरों का जब उल्लेख होता है तो उससे संबंधित सभी पहलुओं को देखना उचित है। रोग पता होने पर ही समाधान हो सकता है। समाधान तभी होगा जब हममें रोग को रोग कहने व उसका उपचार करने की दृढ़ इच्छा शक्ति होगी। कोई भी कार्य असंभव नहीं होता। असंभव वहीं होता है जहाँ इच्छा शक्ति कमजोर होती है।

कहानी के साथ-साथ कविताओं में भी जल से जुड़ी समस्याओं का चित्रण महिला रचनाकार अच्छी ढंग से कर रही हैं। अनुपमा जी की कविता ''पानी की आत्मकथा'' की पंक्तियाँ देखिये-

"मेरा कोई आकार नहीं
कोई रूप साकार नहीं
शिव की जटाओं से जन्मा
तपस्या का मोल, गंगा नाम मिला
पावन हूँ ये कहते हैं
पाप मुझी में धुलते हैं
बहता-बहता रेयत मे हुआ काला
अब पहचान मेरी गन्दा नाला
सुन लो बात रहस्य की कहता हूँ
भले काले में मिल सब होता काला
किंतु समा लेता हर रंग को, सिर्फ रंग काला
न जाने क्यूँ नाक मूँद कर गुज़रते
लोग मुँह से पिचकारी मारते"

जल धारा जब अपने उद्गम से निकलती है, उस समय वह अत्यंत निर्मल व प्रवाह लिए होती है परंतु हम जैसे संवेदनाहीन लोगों की बस्ती में पहुँचकर यह निर्मल धारा भी मलिन व प्रवाहहीन हो जाती है।

'एक नदी की स्मृति में' नामक कविता में कवयित्री सपना जी अचानक सूख गए एक नदी के बारे में बता रही हैं, देखिये-

"देखा मैंने भरी पूरी एक नदी को अचानक सूखते हुए
जीवन में जैसे आ जाते हैं
कभी-कभी प्रसन्नताओं के बाद घोर अवसाद के दिन
वह छोड़ रही थी धीरे-धीरे अपना किनारा
सिकोड़ रही थी अपना जिस्म
किनारे के पत्थरों पर बने पानी के निशानों से ही
देखने वाले अनुमान कर सकते थे-अरे!
कभी यहाँ तक था नदी का जल"

आज मनुष्य पर्यावरण का शत्रु बना हुआ है। शत्रुता को छोड़कर सभी को अपना मित्र बनाना चाहिए और उसके साथ मित्रता का व्यवहार करना चाहिए, इसी में स है। मानव जाति के पोषण और विकास के लिए आवश्यकता इस बात की है कि पर्याव संकट पर प्रत्येक नागरिक को गंभीरता से चिंतन करने व जागरूक हो अपने पूरे परि उसकी देखभाल करने के लिए आगे आने की आवश्यकता है। प्रत्येक व्यक्ति में यह चाहिए कि वह अपने आस-पड़ोस के पर्यावरण को साफ सुथरा रखकर पर्यावरण को स तभी हमारे सुखमय जीवन को भी संरक्षित रखा जा सकता है।

संदर्भ

1. 'समयांतर, फरवरी, 2012
2. रामचरितमानस
3. अमर अक्षर, जुलाई, 2016
4. हरिभूमि, 8 नवंबर, 2010
5. भारत की नदियाँ, राधाकांत भारती, एन.बी.टी., नई दिल्ली
6. मत्स्य पुराण
7. नया ज्ञानोदय, फरवरी, 2011
8. स्त्री आत्मकथा का इतिहास, बलवंत कौर
9. चौराहा, जनवरी, 2015
10. साहित्य क्रांति, फरवरी, 2014
11. सामयिक सरस्वती, जुलाई, 2015
12. अभिनव इमरोज़, मई, 2015
13. हिंदू युग्म, मार्च, 2007

ISSN : 0435-1460

के.हि.सं. गवेषणा

अनुप्रयुक्त भाषाविज्ञान, भाषाशिक्षण तथा साहित्य चिंतन की त्रैमासिक शोध - पत्रिका

अंक-116 : चैत्र-ज्येष्ठ, 2076 /अप्रैल-जून, 2019

केंद्रीय हिंदी संस्थान

आगरा

पद्मभूषण डॉ. मोटूरि सत्यनारायण

(2 फरवरी, 1902 – 6 मार्च, 1995)

आंध्र प्रदेश के कृष्णा जिले के दोण्डपाडु ग्राम में जन्मे, केंद्रीय हिंदी संस्थान के संस्थापक, हिंदी सेवी, पद्मभूषण श्री मोटूरि सत्यनारायण जी भारतीय संविधान सभा के सदस्य के रूप में हिंदी को राजभाषा के पद पर आसीन करवाने वालों में से थे। उनकी स्मृति में संस्थान द्वारा प्रति वर्ष भारतीय मूल के दो विद्वानों को विदेशों में हिंदी के प्रचार-प्रसार हेतु पुरस्कार प्रदान किया जाता है।

ISSN 0435-1460

के.हि.सं. गवेषण

अनुप्रयुक्त भाषाविज्ञान, भाषा शिक्षण तथा साहित्य-चिंतन की शोध पत्रि
अंक-116 : चैत्र-ज्येष्ठ, 2076/अप्रैल-जून, 2

परामर्श मंडल

प्रो. एम. वेंकटेश्वर
एम.ए., पीएच. डी.
पूर्व प्रोफेसर, हिंदी विभाग, अंग्रेजी एवं विदेशी भाषाएँ
विश्वविद्यालय हैदराबाद 500007
ई-मेल : mannar.venkateshwar9@gmail.com

प्रो. उमाशंकर उपाध्याय
एम.ए., पीएच. डी.
पूर्व प्रोफेसर, सावित्री बाई फुले पुणे विश्वविद्यालय, पुणे, महाराष्ट्र
ई-मेल : usupadhyay@gmail.com

प्रो. रामबख्श मिश्र
एम.ए., पीएच. डी.
पूर्व प्रोफेसर, बनारस हिंदू विश्वविद्यालय
बनारस, उ.प्र.

प्रो. सुरेश गौतम
एम.ए., पीएच. डी.
पूर्व प्रोफेसर, केंद्रीय हिंदी संस्थान,
आगरा 282005

प्रो. कुमुद शर्मा
एम.ए., पीएच. डी.
प्रोफेसर, हिंदी विभाग, कला संकाय
दिल्ली विश्वविद्यालय, दिल्ली-110007

संर
डॉ. कमल किशोर गोयन
एम.ए., पीएच
उपाध्यक्ष, केंद्रीय हिंदी शिक्षण मंडल, अ
ई-मेल: kkgoyanka@gmail.

प्रधान संपा
प्रो. नन्दकिशोर पाण
एम.ए., पीएच
निदेशक, केंद्रीय हिंदी संस्थान, अ
ई-मेल: nkpandey65@gmail.

संपा
प्रो. महेन्द्र सिंह रा
एम.ए., पीएच
विभागाध्यक्ष, अनुसंधान एवं भाषा विकास वि
केंद्रीय हिंदी संस्थान, अ

अनुसंधान एवं भाषा विकास विभाग

केंद्रीय हिंदी संस्थान, आग
मानव संसाधन विकास मंत्रालय, भारत सर
हिंदी संस्थान मार्ग, आगरा – 282
दूरभाष : 0562-2530683/684/